

महाकवि कालिदास के ग्रन्थों में प्रकृति-चित्रण

डॉ० ओम प्रकाश सिंह
असि० प्रोफेसर संस्कृत विभाग,
सल्तनत बहादुर पी०जी० कालेज
बदलापुर, जौनपुर, उ०प्र०

कालिदास संस्कृत साहित्य के अमर कवि हैं। उनका स्थान विश्व के उत्कृष्ट कोटि के कवियों में गिना जाता है। उनकी अमर नाट्यकृति “अभिज्ञानशाकुन्तलम्” की तो विश्व के कोने-कोने में प्रशंसा सुनी जाती है पर खेद का विषय है कि सरस्वती के इस अमर पुत्र के जीवन-काल के सम्बन्ध में अद्यावधि कोई ठोस एवं निर्विवाद जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है। कवि ने तो अपने सम्बन्ध में कुछ लिखा ही नहीं है और न किसी अन्य साक्ष्य से ही उनके जीवन-वृत्त पर स्पष्ट प्रकाश पड़ता है। ऐसी परिस्थितियों में हमें भारतीय वाङ्मय के अन्तर्गत यत्र-तत्र बिखरे हुए कुछ अन्तः एवं वाह्य साक्ष्यों पर निर्भर रहकर सन्तोष करना पड़ता है। कालिदास के जीवन-काल की तरह उनके जन्म-स्थान के विषय में भी मतभेद है। कुछ विद्वान उनके नाम के आधार पर उनका वनवासी होना स्वीकार करते हैं। मेघदूत तथा कुमार संभव काव्यों में हिमालय-प्रदेश के सजीव वर्णन के आधार पर कुछ विद्वान उन्हें काश्मीर का निवासी बतलाते हैं। पर कालिदास ने उज्जयिनी के लिए जो विशेष पक्षपात दिखाया है (मेघदूत)¹ उससे वही उनकी जन्मभूमि प्रतीत होती है।

कालिदास में यद्यपि उत्तमोत्तम सभी नाट्य कला सम्बन्धी विशेषतायें हैं, तथापि इनका प्रकृति चित्रण तो अप्रतिम एवं अतिरमणीय हैं। यह तो सर्व विदित ही है कि कालिदास की काव्य कला का विकास ही प्रकृति वर्णन से आरम्भ होता है जो कि उनकी इस काव्य प्रतिभा का प्रमाण है कि उनकी रचनाओं में कथानक गौण हैं प्रकृति ही सब कुछ है। अभिज्ञान शाकुन्तल को यदि इस दृष्टि से पढ़ा जाय तो उसमें आद्योपरान्त कोमल एवं सरस प्रकृति का भव्य वर्णन मिलेगा। उनकी शकुन्तला वस्तुतः प्रकृति कन्या ही है। वह प्रकृति के उन्मुक्त वातावरण में उत्पन्न हुई, प्रकृति ने ही उसका पालन-पोषण और श्रृंगार प्रसाधान किया तथा उसका अधिकांश जीवन भी प्रकृति की गोद में ही व्यतीत हुआ और महर्षि कण्व के शब्दों में “शान्ते करिध्यस पदं पुनराश्रमेऽस्मिन्”² उसने अपना अन्तिम जीवन में प्रकृति की गोद ही में व्यतीत किया। इसी प्रकृति कन्या को कवि ने मानवी रूप में चित्रण किया है। इतना ही नहीं कवि का मेघदूत गीत काव्य तो प्रकृति काव्य ही है। उसका मेघ एक प्रकृति का ही अंग है, उसका सारा कार्य व्यापार प्रकृति क्रीड़ा ही है। भारत वर्ष के भव्य प्राकृतिक दृश्य इस गीति काव्य में देखे जा सकते हैं।

विद्युतत्वन्तं ललितवनिताः सेन्द्रचापंसचित्राः

संगीताय प्रहतमुरजाः स्निग्धगम्भीरघोषम्।

अन्तस्तोयं मणिमयभुवस्तुङ्गमभ्रलिहाग्राः

प्रसादास्त्वां तुलयितुमलं यत्र तैस्तैर्विशेषैः³

जिस अलकापुरी में सुन्दर रमणियों से युक्त चित्रों से अलंकृत संगीत लिए बजाये गये मुदङ्गों से मुक्त मणियों से बनी हुई फर्श वाले गगनचुम्बी भवन बिजली से सनाथ इन्द्रधनुष से अलंकृत, मधुर गंभीर गर्जन करने वाले, भीतर जल से भरे हुए तथा उन्नत तुम्हारे साथ उन-उन विशेषताओं से बराबरी करने में समर्थ है। यहाँ बिजली, इन्द्रधनुष, मधुर गर्जन एवं जल इत्यादि प्रकृति का वर्णन किया गया है। अतः मेघदूत आद्योपान्त प्रकृति काव्य ही है। इसके अतिरिक्त उनकी अन्य सभी रचनाओं में प्रकृति के उत्तमोत्तम दृश्य देखने को मिलते हैं। अतः यह कहना अत्युक्त न होगा कि कालिदास मूलतः प्रकृति कवि हैं और उनकी काव्य कला का आरम्भ प्रकृति चित्रण से ही होता है तथा उसमें उत्तरोत्तर विकास एवं परिमार्जन होता गया है।

कवि की सर्वप्रथम रचना 'ऋतु संहार' है। इसमें कवि ने विभिन्न ऋतुओं से मानवों पर पड़ने वाले प्रभावों का तथा उनके परिणामों का सुन्दर सरस वर्णन किया है। उन्होंने प्राकृतिक दृश्यों पर चेतन धर्म का समारोप कर उसका आलंकारिक चित्र प्रस्तुत किया है और कहीं-कहीं प्रकृति को शुद्ध आलम्बन रूप में भी रखकर उसके प्रति अपना अनुराग व्यक्त किया है।

दिनान्तरम्योऽभ्युप शान्तमन्मयो निदाधकालोऽयमुपागतः प्रिये⁴

इन दिनों हंसों ने सुन्दरियों की मनभावनी चाल को कमलिनियों ने उनके चन्द्र मुख की चमक को नीलकमलों ने उनकी मदभरी चितवन को और छोटी लहरियों ने उनकी भौंहों की सुन्दर मटक को हरा दिया है। इस प्रकार ऋतु संहार का कवि यद्यपि प्रकृति प्रेमी जान पड़ता है तथापि यहाँ उसका यह प्रकृति प्रेम प्रायः उद्दीपन का ही साधन है। इसमें स्त्रियों के विभ्रम विलास एवं श्रृंगार की ही प्रधानता है। कवि ने इसमें कामिनियों के उन विचारों और भावों का ही विशेष रूप से वर्णन किया है जो कि उसमें प्रकृति के प्रभाव से उत्पन्न हुये हैं। इन कामिनियों के भावों का ही वर्णन करने के लिए कवि ने मानों यहाँ प्रकृति की पृष्ठभूमि का आश्रय लिया है। वस्तुतः प्रकृति का वह आलम्बन रूप यहाँ देखने को नहीं मिलता जो कि उनके कुमारसम्भव और रघुवंश आदि में मिलता है। इन अपनी उत्तरकालीन रचनाओं में कवि ने प्राकृतिक एवं दैवी विभूतियों के बीच अद्भुत साम्य स्थापित किया है।

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगधिराजः

पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य, स्थितः पृथित्या इव मानदण्डः

उत्तर दिशा में देवतास्वरूप हिमालय नाम का गिरिराज पूर्व और पश्चिम सागर में अवगाहन करके वसुन्धरा के मापदण्ड के सदृश विद्यमान है।

तथातितप्तं सवितुर्गभस्तिभिर्मुखं तदीयं कमलश्रियं दधौ।

अपाङ्गयोः केवलमस्य दीर्घयोः शनैः शनैः श्यामिकमा कृतं पदम्।

सूर्य की किरणों से उस प्रकार सन्तप्त उनके मुख ने कमल की शोभा को प्राप्त किया, उनके दीर्घ नेत्रप्रान्तों में ही कालिमा ने स्थान लिया।

तदन्वये शुद्धिमति प्रसूतः शुद्धिमत्तरः

दिलीप इति राजेन्दुरिन्दुः क्षीर निधाविव⁷

वैवश्वत मनु के उस पवित्र वंश में अतिपवित्र दिलीप नामक श्रेष्ठ राजा क्षीसागर में चन्द्रमा के समान उत्पन्न हुए।

वह इन रचनाओं में हिमालय सूर्य में दैवी विभक्तियों का अस्तित्व स्वीकार करता है। शाकुन्तल में शकुन्तला के विदा होते समय वृक्षों में निवास करने वाले देवता उसको आभूषण वस्त्र एवं प्रसाधन के अन्य पदार्थ भेंट कर विदा करते हैं।

क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरुणा माङ्गल्यभाविष्कृतं

निष्ठ्यूतश्चरणोंपभोगसुलभः लाक्षारसः केनचित्

अन्येभ्यो वनदेवताकरतलैरा पर्वभागोस्थितै

र्दत्तान्याभारणानि तत् किसलयादे भेदप्रतिद्वन्दिभिः⁸

किसी वृक्ष द्वारा चन्द्रवत श्वेत वर्ण का मंगल कार्य में धारण करने योग्य रेशमी वस्त्रों का जोड़ा निकाल कर दिया गया, किसी वृक्ष के द्वारा चरणों में लगाने योग्य महावर दिया गया अन्य वृक्षों से उन वृक्षों के नवीन निकले हुए पल्लवों से स्पर्धा करने वाले अर्थात् तत्सदृश पर्वभागों तक अर्थात् कलाई अथवा मणिबन्धन स्थान तक बाहर निकले हुए वनदेवताओं के करपल्लवों द्वारा आभूषण दिये गए।

मेघदूत में यज्ञ जब स्वप्न में अपनी पत्नी का दर्शन पाकर बड़ी उत्सुकतापूर्वक उसका आलिङ्गन करने के लिए अपनी भुजायें फैलाते हैं तब उसकी इस विवशता को देखकर वन देवियों की आँखों से मोतियों के समान स्थूल अश्रु बिन्दु वृक्षों के पत्तों पर गिरने लगते हैं—

भामाकाशप्रणिहितभुंज निर्दयाश्लेषहे तो

लब्ध्वायास्ते कथमपि मया स्वप्नसंदर्शनेषु

पश्यन्तीनां न खलु बहुशो न स्थलीदेवतानां

मुक्तास्थूलास्तरु किसलयेष्वश्रुलेशाः पतन्ति⁹

कुमार सम्भव में चन्द्रमा अपनी किरण रूपी अंगुलियों से रजनी नायिका के अन्धकार रूपी केशपाश को हटाकर उसके अर्ध निमीलित कमल नेत्र वाले मुख । चुम्बन करता है—

अङ्गुलीभिर्निवेशसंचयं संनिगृह्य तिमिरीं मरीचिभिः

कुङ्मलीकृतसरोजलोचयनं चुम्बतीव रजनीमुखं शशी¹⁰

इससे स्पष्ट कि इन उत्तरकालीन रचनाओं में कवि के प्रकृति विषयक दृष्टिकोण में पर्याप्त अन्तर आ गया। यहाँ वह समस्त जड़ चेतन सृष्टि में एक ही चेतन तत्व देखता है। उनकी धारणा है कि स्त्री—पुरुष के समान ही लटा वृक्षजादि भी उसी तन्त्र से चेतन है, मानव के साथ इनका चिरस्थायी अटूट सम्बन्ध है। अतएव मानव अपने सुख—दुख का रूप प्रकृति में देखता है और प्रकृति भी मानव से संश्लिष्ट है और उसके प्रति सहानुभूति पूर्ण भी। वह उसके सुख—दुःख को अपना सुख—दुःख मानती है।

इस प्रकार मानव का कोई भी क्रिया-कलाप प्रकृति से बहिर्मुख नहीं होता। कवि की रचनाओं में प्रकृति का यह संश्लिष्ट एवं रूप योजनात्मक वर्णन सर्वत्र देखने को मिलता है। शाकुन्तल के तो प्रत्येक अंक में प्रकृति का यह रूप देखने को मिलता ही है पर अब अन्य ग्रन्थ भी प्रकृति के इस मनोहर रूप से परिपुष्ट हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि कवि ने प्रकृति के मधुर सरस एवं भव्य रूप का ही सर्वत्र चित्रोपम वर्णन किया है। प्रकृति का भयावह रूप जो कि भवभूति आदि अन्य कवियों में मिलता है, कालिदास की दृष्टि उस ओर नहीं गई है। पर प्रकृति के वाह्य दृश्यों के रूप योजनात्मक वर्णन में वे अद्वितीय हैं। उनके ये वर्णन सर्वत्र चित्रोपम सजीव एवं हृदयग्राही ही हैं। रघुवंश के त्रयोदश सर्ग का वर्णन जहाँ कवि कहता है कि यमुना की तरंगों में मिलता हुआ गंगा का प्रवाह ऐसा प्रतीत होता है कि मानो मोतियों की लड़ी में नीलम पिरो दिये गये हों अथवा श्वेत कमल माला में मानों बीच-बीच में नीलकमल पिरो दिये गये हों।

क्वचित्प्रभालेपिभिः इन्द्रनीलैः मुक्तामयी यष्टिः अनुविद्धा इव

अन्यत्र माला सितपङ्कजावा इन्दीवरै त्वलितान्तरा इव

इसी प्रकार मेघ प्रकृति को अपनी प्रियतमा के रूप में देखता है— प्रियङ्गुता ही उसकी प्रियतमा का कोम सरस एवं विकसित अंग है, चकित हरिणियों के दृष्टिपात उसकी प्रियतमा के नयन कटाक्ष हैं चन्द्रमा उसका मुख है मशु वृक्ष केशपाश तथा नदियों की लोल लहरें उसके भ्रूविलास हैं।

श्यामास्वङ्गं चकितहरिणीप्रेक्षणे दृष्टिपातं

वक्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां बर्हभारेषु केशान्

उत्पश्यामि प्रतनुषु नदीवीचिषु भ्रूविलासान्

हप्तैकरुमिप् क्वचिदपि न ते चण्डि सादृश्यमस्ति¹²

केसर वृक्ष के नीचे खड़ी शकुन्तला के कारण केसर वृक्ष भी लतासनाथ प्रतीत होता है।

त्वयोपगतया लतासनाथ इव केसर वृक्षकः प्रतिभाति¹³

और ऐसा होना स्वाभाविक ही है क्योंकि शकुन्तला की भुजायें उस लता की कोमल टहनियाँ हैं अधरोष्ठ की लालिमा किसलय की रक्तिमा है और अंग-प्रत्यङ्ग पर व्याप्त यौवन ही उस लता की कुसुम समृद्धि है। क्योंकि अनेकत्र कालिदास ने यह माना है कि मानव सौन्दर्य से बढ़कर प्रकृति सौन्दर्य है। मानव सौन्दर्य की अभिवृद्धि प्रकृति सौन्दर्य से ही होती है इसीलिए उसने शकुन्तला के सौन्दर्य वर्णन में सर्वत्र प्रकृति उपमानों का ही उपयोग किया है।

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररु है

रनाविद्धं रत्नं मधु नवमजा स्वादि तरसम्

अखण्डं पुण्यानां कलमिव च तदरूपमनघं

न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः¹⁴

दोषरहित उस शकुन्तला का सौन्दर्य किसी के द्वारा न सूँघा गया पुष्प है, नाखूनों से न काटा गया कोमल पल्लव है तथा जिसके रस का अभी तक आस्वादन नहीं किया गया ऐसा नवीन मधु हैं। जन्मान्तरों के संचित सत्कर्मों का अक्षय फल के समान इस सौन्दर्य स्वरूप वाली शकुन्तला का विधाता किसको उपभोक्ता बनायेगा।

कालिदास की प्रकृति कहीं भी मूक चेतनाहीन एवं निष्प्राण नहीं है वह मानवों के समान ही सचेतन एवं सजीव है। सुख-दुःख एवं संवेदना का अनुभव करती है, माव से उसका अटूट प्रेम है। महाकवि कालिदास राज-कवि होते हुए भी कवि ने प्रकृति वर्णन में साम्प्रदायिक रीति का ही अनुसरण नहीं किया है। उसके वर्णन परम्परायुक्त मात्र नहीं हैं अपितु उनमें प्रत्यक्ष निरीक्षण की स्निग्धता सहृदयता की भावना रसिकता तथा कल्पना की कमनीयता सर्वत्र देखी जाती है, इसलिए वे प्रकृति कवि हैं।

सन्दर्भ

1. मेघदूतम्— पूर्व मेघ— 27
2. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 4/20
3. मेघदेतम्— उत्तरमेघ—1
4. ऋतु संहार— प्रथम सर्ग—1
5. कुमारसम्भवम् 1/1
6. वही— 5/21
7. रघुवंश महाकाव्यम्— 1/12
8. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 4/5
9. मेघदूतम्— उत्तरमेघ— 43
10. कुमारसम्भवम्— 8/63
11. रघुवंश महाकाव्यम्— 13/54
12. मेघदेतम्— उत्तरमेघ—41
13. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— प्रथम अंक
14. वही— 2/10